International Journal of Applied Research 2023; 9(2): 158-160

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2023; 9(2): 158-160
www.allresearchjournal.com
Received: 19-11-2022
Accepted: 22-12-2022

डॉ. पूनम तलवार
एसोसिएट प्रोफैसर, हिन्दी विभाग, डी.ए.वी.कॉलेज, लाहौर, अम्बाला शहर, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. पूनम तलवार
एसोसिएट प्रोफैसर, हिन्दी विभाग, डी.ए.वी.कॉलेज, लाहौर, अम्बाला शहर, हरियाणा, भारत

वर्तमान समाज में विवाह के समक्ष चुनौतियां समकालीन महिला उपन्यासकारों के विशेष सन्दर्भ में

डॉ. पूनम तलवार

प्रस्तावना

भू–मंडलीकरण, वैश्वीकरण और बाजारवाद के परिणामस्वरूप पूरा विश्व आज एक गांव में परिवर्तित हो गया है। इससे उत्पन्न उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रभाव पिछले दो–तीन दशकों में पूरे भारतीय समाज पर भी पड़ा है। प्राचीन मानवीय मूल्यों की नई परिभाषाएं बनी हैं और मानवीय सम्बन्धों ने नए आयाम तय किए हैं। वैसे तो हर मानवीय सम्बंध इससे प्रभावित हुआ है, किन्तु भारतीय समाज में परिवार का मूलाधार कहे जाने वाले पति–पत्नी सम्बंध आज एक नए ही रूप में उपस्थित हो रहे हैं। पति–पत्नी संबंध 'विवाह' के संस्कार के साथ बनता है। भारतीय संस्कृति में विवाह–संस्कार सबसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण संस्कार माना जाता रहा है। 'सात जन्मों का बंधन', 'दो आत्माओं का पुनीत मिलन' तथा 'जन्म–जन्म के साथ' वाला ये बंधन–विवाह आज एक नए रूप में उपस्थित होने लगा है। इसके प्राचीन और परम्परागत रूप में तो अन्तर आया ही है, बल्कि आज युवक–युवतियां विवाह की आवश्यकता और सार्थकता पर ही प्रश्न उठाने लगे हैं। और कहीं–कहीं तो इसकी आवश्यकता को सिरे से खारिज करते हुए अन्य विकल्पों की खोज में लिप्त दिखाई देते हैं।

समकालीन महिला उपन्यासकारों ने 'विवाह' के महत्त्व को स्वीकार किया है, किन्तु विवाह के रूढ़ और परम्परागत रूप से वे सहमत दिखाई नहीं देती। उनके उपन्यासों में दम्पत्ति अपने संस्कारों और दायित्व के प्रति सजग होते हुए भी नई राहें चुनते हैं। पति–पत्नी अपने सम्बंधों को जीवन में भौतिक विकास के लिए तोड़ते–मरोड़ते और कहीं–कहीं इसकी आवश्यकता को ही नकारते दिखाई पड़ते हैं। शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर नारी पत्नी के रूप में पुरानी रूढ़ियों और परम्पराओं को नकारती हुई अपनी जीवन–शैली स्वयं चुनने की स्वतंत्रता की मांग कर रही है। आज नारी "विवाह के बाद न केवल दासी बनकर रहना चाहती है, न भोग्या। इन परम्परागत रूपों के विपरीत वह पति के साथ समान अधिकार प्राप्त करना चाहती है क्योंकि नारी केवल शरीर नहीं; केवल स्थूल काया गठरी नहीं। उसको आत्मा में रहने के लिए भी कुछ चाहिए।"[1] औरत कहकर कोई उसे पुरुष से हीन समझे, यह उसे स्वीकार नहीं। 'शाल्मली' उपन्यास की पत्नी शाल्मली की योग्यता और क्षमता के कारण नौकरी में होती निरन्तर उन्नति पति नरेश के अहं को आहत करती है और वह बार–बार शाल्मली को औरत होने का ताना मारता है। प्रत्युत्तर में शाल्मली उसे स्पष्ट जवाब देती है कि "तुम औरत की अक्ल पर शक करना छोड़ दो। एक स्तर के बाद औरत–मर्द नहीं रह जाते हैं बल्कि हमारा काम ही हमारी पहचान होती है, हमारी अक्ल हमारी कसौटी होती है।"[2]

आज नारी के जीवन का एकमात्र लक्ष्य 'विवाह' या 'पति' नहीं रह गया है। स्वयं नासिरा शर्मा कहती हैं "औरत की मंजिल आज इस समाज का सिर्फ मर्द नहीं है।"[3]

'ठीकरे की मंगनी' की महरूख अपने मंगेतर रफत के विदेश में 'लिव–इन–रिलेशनशिप' की खबर से व्यथित होती है, टूटती–बिखरती है। कुछ वर्षों बाद जब रफत विदेश से लौटकर महरूख के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखता है तो महरूख स्पष्ट शब्दों में अस्वीकार करती है क्योंकि उसके लिए "इसके अलावा भी बहुत कुछ है दुनिया में, जिसे हासिल करके इन्सान जी सकता है।"[4] 'अपने–अपने चेहरे' की रमा अविवाहित है, दूसरों द्वारा विवाह न करने का कारण पूछने पर वह प्रत्युत्तर में प्रश्न ही करती है– "क्या औरत की ज़िन्दगी बस एक सही पुरुष की तलाश भर बनकर रह जाए? अपने आप में उसकी कोई सार्थकता नहीं? अकेली औरत क्या समाज का कोई उपयोगी हिस्सा नहीं बन सकती।"[5] मि. और मिसेज गोयनका की बेटी रीतू जब पति की मार–पीट और परस्त्रीगमन की बुरी आदत से तंग आकर मायके आ जाती है तो उसे भी रमा यही समझती है कि "रीतू, जीवन सार्थक बन सके, इसका प्रयास करो। विवाह, पति, बच्चे से परे भी औरत है, उसका अस्तित्व है। उसका सामाजिक अवदान हो सकता है, इस पर सोचो। पति, सर्वस्व नहीं, अपने स्व को पहचानो।"[6]

आज की नारी को अपनी पहचान और अस्मिता पर गर्व है। अपनी अस्मिता के रक्षण हेतु वह प्रतिबद्ध भी है और कटिबद्ध भी। विवाह के नाम पर अपनी पहचान के साथ समझौता करने के लिए वह तैयार नहीं। महरूख अविवाहित रहकर नौकरी और समाजसेवा में ही अपने जीवन की सार्थकता मानती है और 'अपनी ज़िन्दगी से मुतमईन'[7] है। समाज द्वारा पति और घर की आवश्यकता के प्रश्न उठाने पर कहती है कि यदि "घर का मतलब ईंट, गारे, पत्थर की चारदीवारी होता है और शौहर का मतलब ज़िन्दगी की बुनियादी जरूरतों का जरिया– तो फिर वे दोनों मेरे पास मौजूद हैं।"[8] क्योंकि उसका मानना है कि "एक घर औरत का अपना भी तो हो सकता है जो उसके बाप या पति के घर से अलग, उसकी मेहनत और पहचान का हो।"[9] 'शेष कादम्बरी' की रूबी दी द्वारा समाज सेवी संस्था चलाने के पीछे एक मात्र उद्देश्य "अपनी अस्मिता को ढूंढना ही रहा है।"[10] 'खामोश होते सवाल' की अनुराधा भी अपनी समाज सेवी संस्था के उद्देश्य के बारे में अपने ससुर को यही समझाती है "नारी चेतना जगाने की इच्छा। स्त्री को स्वतन्त्रचेता होना चाहिए। वह अपने को पुरुष की मिल्कियत मानकर क्यों चलती रहे? अपनी स्वतन्त्र सत्ता को पहचाने, कर्त्तव्यों के साथ–साथ अपने अधिकारों को भी जाने और पुरूष के द्वारा त्रस्त होने पर इधर–उधर न भटक कर अपने लिए एक इज्ज़त की राह खोज सके।"[11] अपनी पहचान के साथ–साथ वह असहाय तथा शोषितों स्त्रियों को भी आत्मनिर्भर बनाना चाहती है। 'छिन्नमस्ता' की प्रिया को अपने व्यवसाय के कारण बनी अपनी पहचान पर गर्व है– "दुनिया के पैरों तले रौंदी गई, पर मैं मिट्टी के लोंदे में परिवर्तित नहीं हो पाई हूँ। अड़तालीस की उम्र में एक पूरी की पूरी साबुत औरत हूँ, जो ज़िन्दगी को झेल नहीं रही बल्कि हंसते हुए जी रही है, जिसे अपनी उपलब्धियों पर नाज़ है।"[12] क्योंकि वह जानती है कि उसकी यह पहचान उसने स्वयं बनाई है। 'कस्तूरी कुंडल बसै' की कस्तूरी और 'कही ईसुरी फाग' की रजऊ, सरस्वती देवी, मीरा देवी, करिश्मा बेडिनी और ऋतु अपनी पहचान के लिए संघर्ष करती है। आज अधिकांश युवक–युवतियों के जीवन का लक्ष्य अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने के लिए आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना हो गया है। विवाह उनके लिए एक पवित्र सम्बन्ध न रहकर 'एक समझौता' मात्र बन कर रह गया है।

सन्तान – प्राप्ति किसी भी दम्पत्ति के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि मानी जाती रही है। विवाह का चरमोद्देश्य भी इस सम्बंध के माध्यम से पुत्र–प्राप्ति ही माना गया है। किन्तु आज समाज में ऐसे बहुत से दम्पत्ति हैं जो या तो सन्तान चाहते ही नहीं या इस महत्त्वपूर्ण निर्णय को कुछ वर्षों तक टाले रखना चाहते हैं। सन्तान के बिना नारी का जीवन अधूरा और अपूर्ण है क्योंकि 'एक औरत के प्राण उसके बच्चे होते हैं।[13] किन्तु इस परम्परागत अवधारणा को आज के दम्पत्तियों ने पूर्णतः नकार दिया है क्योंकि उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रभावस्वरूप पति–पत्नी दोनों अधिकाधिक भौतिक सुख–सुविधाओं को जुटाने में जुटे रहते हैं। जीवन की इस भाग–दौड़ में वे सन्तान के प्रति अपने दायित्वों से बचना चाहते हैं क्योंकि बच्चे उनके भौतिक विकास के मार्ग में बाधा बन सकते हैं। 'दौड़' की राजुल इसी कारण तनावग्रस्त और अवसाद की शिकार है क्योंकि पुत्र होने के बाद उसे नौकरी छोड़नी पड़ी। ऐसे में राजुल की यही सोच है कि सन्तान के कारण ही उसके जीवन का विकास अवरूद्ध हो गया है। आज बहुत सी स्वतंत्र और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर स्त्रियों का यही मानना है कि बच्चे "वह खूंटे होते हैं जिससे उसके गले की डोरी बंधी रहती है।"[14] और वह अपने स्वच्छन्द जीवन में किसी प्रकार का बन्धन नहीं चाहती। अपना बेटा संजू तलाक के बाद पति के पास ही रह जाने का प्रिया को कोई दुःख नहीं क्योंकि वह जानती है "मेरे संस्कार अलग हैं, मैं संजू के सहारे ज़िन्दगी नहीं बिता सकती।"[15] शाल्मली अपने गर्भ में पल रहे नन्हें जीव की स्वयं आहुति दे आती है क्योंकि वह बच्चे का सहारा लेकर उसके पिता को नहीं पाना चाहती। महरूख को अपने जीवन में विवाह और सन्तान के बिना कोई अधूरापन अनुभव नहीं होता। इसलिए वह सोचती है कि "वह अम्मी से क्या कहे और उन्हें कैसे समझाए कि आपकी महरूख रिवायती दायरे को तोड़कर एक नई ज़मीन पर खड़ी है। वह अगर मां नहीं बनी तो वह अधूरी नहीं है।"[16] 'एक पत्नी के नोट्स' के पति–पत्नी संदीप और कविता में भी सन्तान को लेकर निरन्तर तनाव बना रहता है। कविता मातृत्व सुख चाहती है किन्तु पति संदीप हर बार उसकी इस इच्छा को टालता रहता है क्योंकि उसे लगता है कि वह अभी किसी तीसरे के लिए तैयार नहीं है।

प्राचीन युग से विवाह स्त्री–पुरुष के यौन सम्बंधों को सामाजिक स्वीकृति प्रदान करने वाली संस्था के रूप में महत्वपूर्ण रहा है। किंतु बाज़ारवादी संस्कृति के चलते प्रत्येक स्त्री–पुरुष इतना स्वार्थी और आत्मकेन्द्रित हो गया है कि अपने इस छोटे से जीवन में अधिकाधिक सुख पा लेना चाहता है। इसी सुख पाने की लालसा में वह विवाह की मर्यादाओं का उल्लंघन करने से परहेज नहीं करता। 'समरांगण' के गोपीलाल सुहासनी जैसी सुशील और संस्कारी पत्नी होते हुए भी नर्तकी बूंदाजान से भी दो बच्चों के पिता बनते हैं। उनका बेटा मोहन भी पृथा जैसी पत्नी के होते हुए दूसरी कई स्त्रियों से सम्बंध बनाता है। 'छिन्नमस्ता' का नरेन्द्र, 'विडम्बना' का संदीप, 'खामोश होते सवाल' और 'झूला नट' के पति भी ऐसे सम्बंध बनाते हैं। आज पत्नियां भी इस दृष्टि से पतियों से पीछे नहीं हैं। 'पीली आंधी' की सोमा विवाहित है, अपने ही अध्यापक प्रो. सुजीत से गर्भवती होती है। परिवार से मिले अपमान और तिरस्कार से कोई ग्लानि का भाव उसके मन में उत्पन्न नहीं होता। बल्कि वह प्रत्युत्तर प्रश्न पूछने का साहस रखती है– "आखिर गलत क्या है? ऐसा कौन सा अपराध मैं कर रही हूँ? किसी पराए पुरुष को यदि मैं अपनाना चाहती हूँ तो अनोखा क्या है? क्या कभी विवाहित स्त्री ने अन्य विवाहित पुरुष से प्यार नहीं किया है? फिर यह भय और ग्लानि क्यों?"[17] 'चाक' की सारंग नैनी विवाहित होते हुए भी स्कूल के मास्टर श्रीधर के साथ अपने शारीरिक संबंधों को अनुचित नहीं मानती। प्राचीन युग में अधिकतर पुरुष ही विवाहेतर सम्बंध बनाते दिखाई देते थे, किन्तु आज स्त्री भी ऐसे सम्बंधों में खुलेआम लिप्त दिखाई देती है।

महिला लेखिकाओं ने विवाह के महत्त्व को स्वीकारा है, किन्तु वहीं तक, जहां पति–पत्नी में परस्पर विश्वास और सम्मान का भाव हो, लेकिन जहां पति, पत्नी के अधिकारों को रौंदे, उसकी निर्णय लेने की क्षमता और योग्यता की उपेक्षा करें, वहां लेखिकाओं ने तलाक या संबंध–विच्छेद की स्वतन्त्रता चाही है। 'विडम्बना' की विनती विदेश में रहकर पति के दुराचार से तंग होकर भारत वापिस लौटती है। पति जब वापिस लिवाने के लिए आता है तो सीधे–सीधे तलाक की मांग करती है। अपनी माँ के समझाने पर उसे भी यह स्पष्टीकरण देती है कि "जो रिश्ते गल–सड़ चुके हों, जिनमें से सड़ांध आने लगी हो, उन्हें काटकर फेंक देना चाहिए।"[18] विवाहेतर सम्बन्धों तथा भावात्मक और बौद्धिक सामंजस्य के अभाव में तलाक या संबंध विच्छेद की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। आज पति–पत्नी का अहं जब भी टकराता है तो दोनों उसे स्नेह और सहिष्णुता से सुलझाने की उपेक्षा अपनी–अपनी स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण रखने के लिए अलग–अलग रास्ते चुनने में नहीं हिचकिचाते। आज दाम्पत्य संबंधों में आई दूरियां ढ़ोने के लिए पति–पत्नी विवश नहीं हैं क्योंकि "जब प्यार नहीं, तब इस व्यवस्था को ढ़ोने से फायदा?[19] आज पति–पत्नी दोनों की एक स्पष्ट सोच है, जीवन के प्रति स्पष्ट दृष्टिकोण है। इसलिए वे जानते हैं कि "यह जरूरी तो नहीं कि दोनों का विकास एक साथ एक ही दिशा में हो? दोनों दो भिन्न दिशाओं में जा सकते हैं? रुचियां, परिवेश सभी कुछ तो बदल जाता है।"[20] 'पीली आंधी' की सोमा अपने पति गौतम से तलाक लेकर प्रो. सुजीत से विवाह करना चाहती है। परिवार का

विरोध देखकर वह उन्हें समझाती है कि "विवाह एक संस्था है, रजिस्ट्री के कागजों पर सही किया हुआ नाम है। तलाक की व्यवस्था कानून ने बनाई है। कानून मनुष्य के स्वभाव को समझकर ही बनाया जाता है। यदि दो व्यक्ति एक साथ नहीं रह सकते, यदि कहीं कोई गहरी कमी है। तब इस बंधन को तोड़ा भी जा सकता है, बल्कि तोड़ ही देना चाहिए।"[21]

आज के दम्पत्ति अन्तर्राष्ट्रीय कंपनियों में कार्यरत हैं। पति–पत्नी का दो अलग–अलग शहरों या देशों में रहकर नौकरी करना साधारण सी बात बन गई है। महिला लेखिकाओं से इस कारण से वैवाहिक संबंधों में उत्पन्न होने वाली दूरियां छिपी नहीं हैं। 'दौड़' के नव दम्पत्ति पवन और स्टैला अपने–अपने काम के कारण 'तीन हजार किलोमीटर' की दूरी पर रहते हैं। जिसके कारण पवन के माता–पिता दुःखी व चिन्तित हैं, किन्तु नव दम्पत्ति पूर्णतः सहज है। क्योंकि वे इंटरनेट और सेटेलाईट के माध्यम से बात तो कर ही पाएंगे और जेट और एयरलाइंस की उड़ानों की सहायता से, आवश्यकता पड़ने पर, सात घंटों में ही एक दूसरे के पास पहुंच सकते हैं। ऐसे सम्बंधों में भावात्मकता, लगाव और स्नेह का पनपना नामुमकिन है। क्योंकि हर व्यक्ति सम्बंधों को ताक पर रखकर किसी न किसी वस्तु के पीछे दौड़ता दिखाई देने लगा है। भौतिक उपलब्धियों का महत्त्व मानवीय संबंधों से अधिक आंका जाने लगा है। इसलिए आज के पति–पत्नी की यह मानसिकता भी विवाह संबंधों के लिए एक बड़ी चुनौती है।

विवाह का परम्परागत रूप पूर्णतः नए स्वरूप में विद्यमान है। विवाह से जुड़े दायित्वों और अंकुशों को नकारते हुए आज स्त्री–पुरुष विवाह के नए विकल्पों को अपना रहे हैं जिसमें 'लिव–इन–रिलेशनशिप' नगरों महानगरों में बड़ी संख्या में देखा जा सकता है, स्त्री–पुरुष विवाह किए बिना एक ही छत के नीचे अपनी भावात्मक और शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु रहते हैं। इस सम्बन्ध में उन्हें अपने साथी से कभी भी अलग और स्वतन्त्र होने की स्वच्छन्दता बनी रहती है। 'शेष कादम्बरी' में रूबी दी की नातिन कादम्बरी अपने पत्रकार मित्र गौतम के साथ और 'कठगुलाब' में विपिन और नीरजा ऐसे ही सम्बंध को जीते हैं। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से समलैंगिकता का भी प्रचलन हुआ है। समलैंगिकता को कानून की दृष्टि से वैधता की मांग भी पिछले कई वर्षों से भारत में हो रही थी। किन्तु पिछले दिनों उच्चतम न्यायालय द्वारा इसे अस्वीकार किया गया है। उच्चतम न्यायालय का यह आदेश विवाह की संस्था को पुनः स्थापित करने और इसकी सार्थकता को बनाए रखने में एक महत्त्वपूर्ण कदम सिद्ध होगा। आज समाज में अविवाहित रहना और अविवाहित रहते हुए किसी बच्चे को गोद लेने का प्रचलन भी बढ़ा है। और सन्तान प्राप्ति के लिए सैरोगेसी अर्थात् किसी दूसरी स्त्री की कोख किराए पर लेने के उदाहरण भी देखे जा सकते हैं।

अस्तित्व की तलाश में डूबा, आर्थिक संकटों से जूझता हुआ, भौतिक सुख–सुविधाओं के संचय में जुटा हर व्यक्ति– चाहे वह स्त्री हो या पुरुष–विवाह के नाम पर किसी प्रकार बंधन में या तो बंधना नहीं चाहता या जब तक वह इसकी आवश्यकता और सार्थकता को समझता है तब तक समय निकल जाता है या इस भागमभाग में वह अपने विवाहित जीवन को नरक जैसा असहनीय बना लेता है। आज के स्त्री और पुरुष की यह विवशता बन चुकी है कि अपने सम्यक् विकास के लिए विवाह से हट कर ही सोचता है और उसकी यही विवशता विवाह की संस्था के लिए एक बड़ी चुनौती है। वस्तुतः विवाह जैसी सामाजिक संस्था पर प्रश्न और सवाल उठने से इसकी महत्ता क्षीण हो रही है, इसकी सार्थकता अपना मूल्य खोने लगी है और इसकी आवश्यकता भी अनेक प्रश्नों के घेरे में घिरी दिखती है। किन्तु यह तय है कि विवाह जैसी संस्था का अवमूल्यन और विघटन होने से परिवार जैसी महत्त्वपूर्ण सामाजिक इकाई विघटित होगी और विघटित परिवारों के कारण अन्ततः समाज का विघटन निश्चित है।

सन्दर्भ सूची

1. रामेश्वर शुक्ल अंचल, उल्का, पृ. 109
2. नासिरा शर्मा, शाल्मली, सरस्वती बिहार, नई दिल्ली, पृ. 56
3. सुमन माला ठाकुर द्वारा साक्षात्कार, गंगा पत्रिका, 1986
4. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगळी, किताब घर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 11
5. प्रभा खेतान, अपने अपने चेहरे, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 103–104
6. वही, पृ. 94
7. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगनी, पृ. 194
8. वही, पृ. 125
9. वही, पृ. 197
10. अलका सरावगी, शेष व्यादम्बरी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 15
11. शशि प्रभा शास्त्री, खामोश होते सवाल, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 196
12. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 25
13. मेहरुन्निसा परवेज़, समरांगण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 196
14. वही
15. प्रभा खेतान, छिन्नमस्ता, पृ. 170
16. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगनी, पृ. 190
17. प्रभा खेतान, पीली आंधी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ. 246
18. अनीता सुरभि, विडम्वना, सुन्दर साहित्य सदन, दिल्ली, पृ. 129
19. प्रभा खेतान, पीली आंधी, पृ. 259
20. वही, पृ. 260
21. वही, पृ. 245